# राम, कृष्ण और शिव

## राममनोहर लोहिया

दुनिया के देशों में हिंदुस्तान किंवदंतियों के मामले में सबसे धनी है। हिंदुस्तान की किंवदंतियों ने सदियों से लोगों के दिमाग पर निरंतर असर डाला है। इतिहास के बड़े लोगों के बारे में, चाहे वे बुद्ध हों या अशोक, देश के चौथाई से अधिक लोग अनभिज्ञ हैं। दस में एक को उनके काम के बारे में थोड़ी-बहुत जानकारी होगी और सौ में एक या हजार में एक उनके कर्म और विचार के बारे में कुछ विस्तार से जानता हो तो अचरज की बात होगी। देश के तीन सबसे बड़े पौराणिक नाम - राम, कृष्ण और शिव - सबको मालूम हैं। उनके काम के बारे में थोड़ी-बहुत जानकारी प्राय: सभी को, कम से कम दो में एक को तो होगी ही। उनके विचार व कर्म, या उन्होंने कौन-से शब्द कब कहे, उसे विस्तारपूर्वक दस में एक जानता होगा। भारतीय आत्मा के लिए तो बेशक और कम से कम अब तक के भारतीय इतिहास की आत्मा के लिए और देश के सांस्कृतिक इतिहास के लिए, यह अपेक्षाकृत निरर्थक बात है कि भारतीय पुराण के ये महान लोग धरती पर पैदा हुए भी या नहीं।

राम और कृष्ण शायद इतिहास के व्यक्ति थे और शिव भी गंगा की धारा के लिए रास्ता बनानेवाले इंजीनियर रहे हों और साथ-साथ एक अद्वितीय प्रेमी भी। इनको इतिहास के परदे पर उतारने की कोशिश करना, और ऐसी कोशिश होती भी है, एक हास्यास्पद चीज होगी। संभावनाओं की साधारण कसौटी पर इनकी जीवन कहानी को कसना उचित नहीं। सत्य का इससे अधिक आभास क्या मिल सकता है कि पचास या शायद सौ शताब्दियों से भारत की हर पीढ़ी के दिमाग पर इनकी कहानी लिखी हुई है। इनकी कहानियाँ लगातार दुहराई गई हैं। बड़े कवियों ने अपनी प्रतिभा से इनका परिष्कार किया है और निखारा है तथा लाखों-करोड़ों लोगों के सुख और दु:ख इनमें धुले हुए हैं।

किसी कौम की किंवदंतियाँ उसके दु:ख और सपनों के साथ उसकी चाह, इच्छा और आकांक्षाओं का प्रतीक हैं, तथा साथ-साथ जीवन के तत्व उदासीनता और स्थानीय व संसारी इतिहास का भी। राम और कृष्ण और शिव भारत की उदासी और साथ-साथ रंगीन सपने हैं। उनकी कहानियों में एकसूत्रता ढूँढ़ना या उनके जीवन में अटूट नैतिकता का ताना-बाना बुनना या असंभव व गलत लगनेवाली चीजें अलग करना उनके जीवन का सब कुछ नष्ट करने जैसा होगा। केवल तर्क बचेगा। हमें बिना हिचक के मान लेना चाहिए कि राम और कृष्ण और शिव कभी पैदा नहीं हुए, कम से कम उस रूप में, जिसमें कहा जाता है। उनकी किंवदंतियाँ गलत और असंभव हैं। उनकी श्रृंखला भी कुछ मामले में बिखरी है जिसके फलस्वरूप कोई तार्किक अर्थ नहीं निकाला जा सकता। लेकिन यह स्वीकारोक्ति बिल्कुल अनावश्यक है। भारतीय आत्मा के इतिहास के लिए ये तीन नाम सबसे सच्चे हैं और पूरे कारवाँ में महानतम हैं। इतने ऊँचे

और इतने अपूर्व हैं कि दूसरों के मुकाबले में गलत और असंभव दीखते हैं। जैसे पत्थरों और धातुओं पर इतिहास लिखा मिलता है वैसे ही इनकी कहानियाँ लोगों के दिमागों पर अंकित हैं जो मिटाई नहीं जा सकतीं।

भारत की पहाड़ियों में देवी-देवताओं का निवास माना जाता है जिन्होंने कभी-कभी मनुष्य रूप में धरती पर आ कर बड़ी नदियों के साँपों को मारा है या पालतू बनाया है और भक्त गिलहरियों ने समुद्र बाँधा है। रेगिस्तानी इलाकों के दैवी विश्वास यहूदी, ईसाई और इस्लाम से सभी देवता मिट चुके हैं, सिवा एक के, जो ऊपर और पहुँच के बाहर हैं, तथा उनके पहाड़, मैदान और नदियाँ किंवदंतियों से शून्य हैं। केवल पढ़े-लिखे लोग या पुरानी गाथाओं की जानकारी रखनेवाले लोग माउंट ओलिपंस के देवताओं के बारे में जानते हैं। भारत में जंगलों पर अटूट विश्वास और चंद्रमा का जड़ी-बूटी, पहाड़, जल और जमीन के साथ हमेशा चलनेवाला खिलवाड़ देवताओं और उनके मानवीय रूपों को सजीव रखता है व इनमें निखार लाता है। किंवदंतियाँ कथा नहीं हैं। कथा शिक्षक होती है। कथा का कलाकृति होना या मनोरंजक होना उसका मुख्य गुण नहीं, उसका मुख्य काम तो सीख देना है। किंवदंतियाँ सीख दे सकती हैं, मनोरंजन भी कर सकती हैं, लेकिन इनका मुख्य काम दोनों में से एक भी नहीं है। कहानी मनोरंजन करती है। बालजाक और मोपाँसा और ओ. हेनरी ने अपनी कहानियों द्वारा लोगों का इतना मनोरंजन किया कि उनकी कौमों के दस में एक आदमी उनके बारे में अच्छी तरह जानता है। इससे उनके जीवन में बेशक गहराई और बड़प्पन आता है। बड़ा उपन्यास भी मनोरंजन करता है यद्यपि उसका असर उतना जाहिर तो नहीं लेकिन शायद गहरा अधिक होता है।

किंवदंती असंख्य चमत्कारी कहानियों से भरे प्राय: अनंत उपन्यास की तरह है। इनसे अगर सीख मिलती है तो केवल अपरोक्ष रूप से। ये सूरज, पहाड़ या फल-फूल जैसी हैं और हमारे जीवन का प्रमुख अंश हैं। आम और सतालू हमारे शरीर-तंतु बनाते हैं - वे हमारे रक्त और मांस में घुले हैं। किंवदंतियाँ लोगों के शरीर-तंतु की अवयव हैं - ये उनके रक्त-मांस से घुली-मिली होती हैं। इन किंवदंतियों को महान लोगों के जीवन के पवित्र नमूने के रूप में देखना एक हास्यास्पद मूर्खता होगी। लोग अगर इनको अपने आचार-विचार के नमूने के रूप में देखेंगे तो राम, कृष्ण और शिव की प्रतिष्ठा को नीचे गिराएँगे। वे पूरे भारत के तंतु और रक्त-मांस के हिस्से हैं। उनके संवाद और उक्तियाँ, उनके आचार और कर्म, उनके भिन्न-भिन्न मौकों पर किए काम और उसके साथ उनकी भ्रू-भंगिमा और उनके ठीक वही शब्द जो उन्होंने किसी खास मौके पर कहे थे, ये सब भारतीय लोगों की जानी-पहचानी चीजें हैं। ये सचमुच एक भारतीय की आस्था और कसौटी हैं, न केवल सचेत दिमागी कोशिश के रूप में बल्कि उस रूप में भी जैसे रक्त की शुद्धता पर स्वस्थ या रुग्ण होना या न होना निर्भर होता है।

किंवदंतियाँ एक तरह से महाकाव्य और कथा, कहानी और उपन्यास, नाटक और कविता की मिली-जुली उपज हैं। किंवदंतियों में अपरिमित शक्ति है और ये अपनी कौम के दिमाग का अंश बन जाती हैं। इन किंवदंतियों में अशिक्षित लोगों को भी सुसंस्कृत करने की ताकत होती है। लेकिन उनमें सड़ा देने की क्षमता भी होती है। थोड़ा अफसोस होता है कि ये किंवदंतियाँ बुनियाद में विश्ववादी होते हुए भी स्थानीय रंग में रँगी होती हैं। इससे लगभग वैसा ही अफसोस होता है, जैसा हर काल के, हर मनुष्य के, एक साथ और एक स्थान पर न रहने रहने से होता है। मनुष्य जाति को अलग-अलग जगहों पर बिखर कर रहना होता है और इन जगहों की नदियाँ और पहाड़, लाल या मोती देनेवाले समुद्र अलग हैं। विश्ववाद की जीभ स्थानीय ही होगी। यह समस्या स्त्री-पुरुष और उनके बच्चों की शिक्षा के लिए बराबर बनी रहेगी। अगर विश्ववाणी से स्थानीय रंग दूर किया जाए तो इस प्रक्रिया में भावनाओं का चढ़ाव-उतार खत्म हो जाएगा, उनका रक्त सूख जाएगा और वह एक पीले साए के समान रह जाएगी। पिता राइन, गंगा मैया और पुनीत अमेजन सब एक चीजें हैं, लेकिन उनकी कहानी अलग-अलग है। शब्द के मतलब कुछ और भी होते हैं, सिवाय उनके नाम या जिसके लिए उसका इस्तेमाल होता है। इनका पूरा मतलब और मजा उस स्थान और उसके इतिहास से लगातार रिश्ता होने पर ही मिल सकता है। गंगा एक ऐसी नदी है जो पहाड़ियों और घाटियों में भटकती फिरती है, कलकल निनाद करती है, लेकिन उसकी गति एक भारी-भरकम शरीरवाली औरत के समान मंदगामिनी है। गंगा का नाम गम् धातु से बना है जिससे गमगम संगीत बनता है, जिसकी ध्वनि सितार की थिरकन के समान मधुर है। भारतीय शिल्प कला के लिए, घड़ियाल पर गंगा और कछुए पर उसकी छोटी बहन जमुना, एक रुचिकर विषय है। यदि अनामी मूर्तियों को शामिल न किया जाए, तो वे भारतीय महिलाओं के प्रस्तर रूप की सर्वश्रेष्ठ सुंदरियाँ हैं। गंगा और यमुना के बीच आदमी मंत्रमुग्ध-सा खड़ा रह जाता है कि ये कितनी समान हैं, फिर भी कितनी अलग। उनमें से किसी एक को चुनना बहुत मुश्किल है। ऐसी स्थानीय आभा से विश्ववाणी निकलती है। इनसे उबरने का एक रास्ता हो सकता है। दुनिया-भर की कौमों की किंवदंतियाँ और कहानियाँ इकठ्ठी की जाएँ, उसी खूबी और सच्चाई के साथ, और उनमें प्रयोजन या सीख डालने की कोशिश न की जाए। जो दुनिया का चक्कर लगाते हैं उनकी मनुष्य जाति के प्रति जिम्मेदारी होती है कि वे इनके बारे में जहाँ जाएँ, चर्चा करें। मिसाल के लिए हवाई द्वीप की मैडम पिलू की, जो अपनी उपस्थिति से दो-तीन दिन तक आदमी को मुग्ध कर लेती है, जो छूने की कोशिश करने पर अंतर्धान हो जाती है, जो चाहती है कि उसके क्रेटर में सिगरेट का धुआँ फेंका जाए और जो बदले में गंधक का धुआँ फेंकती है।

राम, कृष्ण और शिव भारत में पूर्णता के तीन महान स्वप्न हैं। सब का रास्ता अलग-अलग है। राम की पूर्णता मर्यादित व्यक्तित्व में है, कृष्ण की उन्मुक्त या संपूर्ण व्यक्तित्व में और शिव की असीमित व्यक्तित्व में लेकिन हरेक पूर्ण है। किसी एक का एक या दूसरे से अधिक या कम पूर्ण होने का कोई सवाल नहीं उठता। पूर्णता में विभेद कैसे हो सकता है? पूर्णता में केवल गुण और किस्म का विभेद होता है। हर आदमी अपनी पसंद कर सकता है या अपने जीवन के किसी विशेष क्षण से संबंधित गुण या पूर्णता चुन सकता है। कुछ लोगों के

लिए यह भी संभव है कि पूर्णता की तीनों किस्में साथ-साथ चलें, मर्यादित, उन्मुक्त और असीमित व्यक्तित्व साथ-साथ रह सकते हैं। हिंदुस्तान के महान ऋषियों ने सचमुच इसकी कोशिश की है। वे शिव को राम के पास और कृष्ण को शिव के पास ले आए हैं और उन्होंने यमुना के तीर पर राम को होली खेलते बताया है। लोगों के पूर्णता के ये स्वप्न अलग किस्मों के होते हुए भी एक-दूसरे में घुल-मिल गए हैं, लेकिन अपना रूप भी अक्षुण्ण बनाए रखे हैं। राम और कृष्ण, विष्णु के दो मनुष्य रूप हैं जिनका अवतार धरती पर धर्म का नाश और अधर्म के बढ़ने पर होता है। राम धरती पर त्रेता में आए जब धर्म का रूप इतना अधिक नष्ट नहीं हुआ था। वह आठ कलाओं से बने थे, इसलिए मर्यादित पुरुष थे। कृष्ण द्वापर में आए जब अधर्म बढ़ती पर था। वे सोलहों कलाओं से बने हुए थे और इसलिए एक संपूर्ण पुरुष थे। जब विष्णु ने कृष्ण के रूप में अवतार लिया तो स्वर्ग में उनका सिंहासन बिल्कुल सूना था। लेकिन जब राम के रूप से आए तो विष्णु अंशत: स्वर्ग में थे और अंशत: धरती पर।

इन मर्यादित और उन्मुक्त पुरुषों के बारे में दो बहुमूल्य कहानियाँ कही जाती हैं। राम ने अपनी दृष्टि केवल एक महिला तक सीमित रखी, उस निगाह से किसी अन्य महिला की ओर कभी नहीं देखा। यह महिला सीता थी। उनकी कहानी बहुलांश राम की कहानी है जिनके काम सीता की शादी, अपहरण और कैद-मुक्ति और धरती (जिसकी वे पुत्री थी) की गोद में समा जाने के चारों ओर चलते हैं। जब सीता का अपहरण हुआ तो राम व्याकुल थे। वे रो-रो कर कंकड़, पत्थर और पेड़ों से पूछते थे कि क्या उन्होंने सीता को देखा है। चंद्रमा उन पर हँसता था। विष्णु को हजारों वर्ष तक चंद्रमा का हँसना याद रहा होगा। जब बाद में वे धरती पर कृष्ण के रूप में आए तो उनकी प्रेमिकाएँ असंख्य थीं। एक आधी रात को उन्होंने वृंदावन की सोलह हजार गोपियों के साथ रास नृत्य किया। यह महत्व की बात नहीं कि नृत्य में साठ या छह सौ गोपिकाएँ थीं और रासलीला में हर गोपी के साथ कृष्ण अलग-अलग नाचे। सबको थिरकानेवाला स्वयं अचल था। आनंद अटूट और अभेद्य था, उसमें तृष्णा नहीं थी। कृष्ण ने चंद्रमा को ताना दिया कि हँसो। चंद्रमा गंभीर था। इन बहुमूल्य कहानियों में मर्यादित और उन्मुक्त व्यक्तित्व का रूप पूरा उभरा है और वे संपूर्ण हैं।

सीता का अपहरण अपने में मनुष्य जाति की कहानियों की महानतम घटनाओं में से एक है। इसके बारे में छोटी-से-छोटी बात लिखी गई है। यह मर्यादित, नियंत्रित और वैधानिक अस्तित्व की कहानी है। निर्वासन काल के परिभ्रमण में एक मौके पर जब सीता अकेली छूट गई थी तो राम के छोटे भाई लक्ष्मण ने एक घेरा खींच कर सीता को उसके बाहर पैर न रखने के लिए कहा। राम का दुश्मन रावण उस समय तक अशक्त था जब तक कि एक विनम्र भिखमंगे के छद्मवेश में सीता को उसने उस घेरे के बाहर आने के लिए राजी नहीं कर लिया। मर्यादित पुरुष हमेशा नियमों के दायरे में रहता है।

उन्मुक्त पुरुष नियम और कानून को तभी तक मानता है जब तक उसकी इच्छा होती है और प्रशासन में कठिनाई पैदा होते ही उनका उल्लंघन करता है। राम के मर्यादित व्यक्तित्व के बारे में एक और बहुमूल्य कहानी है। उनके अधिकार के बार में, जो नियम और कानून से बँधे थे, जिनका उल्लंघन उन्होंने कभी नहीं किया और जिनके पूर्ण पालन के कारण उनके जीवन में तीन या चार धब्बे भी आए। राम और सीता अयोध्या वापस आ कर राजा और रानी की तरह रह रहे थे। एक धोबी ने कैद में सीता के बारे में शिकायत की। शिकायती केवल एक व्यक्ति था और शिकायत गंदी होने के साथ-साथ बेदम भी थी। लेकिन नियम था कि हर शिकायत के पीछे कोई न कोई दुःख होता है और उसकी उचित दवा या सजा होनी चाहिए। इस मामले में सीता का निर्वासन ही एकमात्र इलाज था। नियम अविवेकपूर्ण था, सजा क्रूर थी और पूरी घटना एक कलंक थी जिसने राम को जीवन के शेष दिनों में दुःखी बनाया। लेकिन उन्होंने नियम का पालन किया, उसे बदला नहीं। वे पूर्ण मर्यादा पुरुष थे। नियम और कानून से बँधे हुए थे और अपने बेदाग जीवन में धब्बा लगने पर भी उसका पालन किया।

मर्यादा पुरुष होते हुए भी एक दूसरा रास्ता उनके लिए खुला था। सिंहासन त्याग कर वे सीता के साथ फिर प्रवास कर सकते थे। शायद उन्होंने यह सुझाव रखा भी हो, लेकिन उनकी प्रजा अनिच्छुक थी। उन्हें अपने आग्रह पर कायम रहना चाहिए था। प्रजा शायद नियम में ढिलाई करती या उसे खत्म कर देती। लेकिन कोई मर्यादित पुरुष नियमों का खत्म किया जाना पसंद नहीं करेगा जो विशेष काल में या किसी संकट से छुटकारा पाने के लिए किया जाता है। विशेषकर जब स्वयं उस व्यक्ति का उससे कुछ न कुछ संबंध हो। इतिहास और किंवदंती दोनों में अटकलबाजियों या क्या हुआ होता, इस सोच में समय नष्ट करना निरर्थक और नीरस है। राम ने क्या किया था, क्या कर सकते थे, यह एक मामूली अटकलबाजी है, इस बात की अपेक्षा कि उन्होंने नियम का यथावत पालन किया जो मर्यादित पुरुष की एक बड़ी निशानी है। आजकल व्यक्ति नेतृत्व और सामूहिक नेतृत्व के बारे में एक दिलचस्प बहस छिड़ी हुई है। व्यक्ति और सामूहिक नेतृत्व दोनों बुनियादी तौर पर उन्मुक्त व्यक्तित्व के वर्ग के हो सकते हैं जो नियम-कानून नहीं मानते। सारा फर्क इससे पड़ता है कि एक व्यक्ति नौ या पंद्रह व्यक्तियों का समूह अपने अधिकार के चारों ओर खींचे गए नियम के दायरे में रहता है या नहीं। एक व्यक्ति की अपेक्षा नौ व्यक्तियों के समूह के लिए मर्यादा तोड़ना अधिक कठिन होता है लेकिन जीवन एक निरंतर चाल है और हर तरह की परस्पर विरोधी शक्तियों की बदलती मात्रा के धुँधलकों में चलता रहता है।

इस क्रम में व्यक्ति और समूह की उन्मुक्तता में बराबर अदला-बदली चल रही है। संपूर्ण व्यक्ति संपूर्ण समूह के लिए जगह छोड़ता है और इसका उलटा भी होता है। लेकिन एक बड़ी अदला-बदली भी चलती रहती है जिसके चौखटे में व्यक्ति और समूह का आगे-पीछे होना लगा रहता है और वह है मर्यादित पुरुष और उन्मुक्त पुरुष के बीच अदला-बदली। राम मर्यादित पुरुष थे जैसे कि वास्तविक वैधानिक प्रंजातंत्र, कृष्ण एक उन्मुक्त पुरुष थे, लगभग वैसे ही जैसे नेताओं की उच्चस्तरीय समिति जो अपनी बुद्धि से हर नियम का अतिक्रमण

करती है। यह एक उन्मुक्त समूह है। इन दो सवालों में, कि व्यक्ति या समूह के पास शक्ति है या कि अधिकार एक सीमा और दायरे में या खुला और छूटवाला है, दूसरा सवाल अधिक महत्वपूर्ण है। क्या अधिकार नियम और कानून के ऊपर चल सकता है, जब इस बड़े सवाल का हल मिल जाएगा तक छोटा सवाल उठेगा कि मर्यादित अधिकारी व्यक्ति है या समूह। बेशक सर्वोत्तम अधिकारी मर्यादित समूह है।

राम मर्यादा पुरुष थे। ऐसा रहना उन्होंने जान-बूझ कर और चेतन रूप से चुना था। बेशक नियम और कानून आदेश पालन के लिए एक कसौटी थे। लेकिन यह बाहरी दबाव निरर्थक हो जाता यदि उसके साथ-साथ अंदरूनी प्रेरणा भी न होती। विधान के बाहरी नियंत्रण और मन की अंदरूनी मर्यादा एक-दूसरे को पुष्ट और मजबूत करते हैं। किसी भी प्रेरक की प्राथमिकता का तर्क देना निरर्थक होगा। किसी मर्यादित पुरुष के लिए विधान की बाहरी जंजीरें मन की अंदरूनी प्रेरणा का दूसरा नाम होंगी। मर्यादित पुरुष का काम दोनों में मेल-जोल और समानांतर का निर्णय करना है। मर्यादाएँ बाहरी नियंत्रण तो हैं ही लेकिन अंदरूनी सीमाओं को भी वे छूती हैं। मर्यादित नेतृत्व वास्तव में नियंत्रित नेतृत्व है लेकिन साथ-साथ वह मन के क्षेत्र में भी पहुँचता है। राम सचमुच एक नियंत्रित व्यक्ति थे लेकिन उनका केवल इतना ही वर्णन करना गलत होगा क्योंकि वे साथ-साथ मर्यादित पुरुष थे और नियम के दायरे में चलते थे।

रावण के आखिरी क्षणों के बारे में एक कहानी कही जाती है। अपने जमाने का निस्संदेह वह सर्वश्रेष्ठ विद्वान था। हालाँकि उसने अपनी विद्या का गलत प्रयोग किया, फिर भी बुरे उद्देश्य परे रख कर मनुष्य जाति के लिए उस विद्या का संचय आवश्यक था। इसलिए राम ने लक्ष्मण को रावण के पास अंतिम शिक्षा माँगने के लिए भेजा। रावण मौन रहा। लक्ष्मण वापस आए। उन्होंने अपने भाई से असफलता का बयान किया और इसे रावण का अहंकार बताया। जो हुआ था उसका पूरा ब्यौरा राम ने उनसे पूछा। तब पता लगा कि लक्ष्मण रावण के सिरहाने खड़े थे। लक्ष्मण पुन: भेजे गए कि रावण के पैताने खड़े हो कर निवेदन करें। फिर रावण ने राजनीति की शिक्षा दी।

शिष्टाचार की यह सुंदर कहानी अद्वितीय और अब तक की कहानियों में सर्वश्रेष्ठ है। शिष्टाचार निश्चय ही उतना महत्वपूर्ण है जितनी नैतिकता, क्योंकि व्यक्ति कैसे खाता है या चलता है, या उठता-बैठता है, या कैसा दीख पड़ता है, कैसे कपड़े पहनता है, अपने लोगों से कैसे बात करता है या उनके साथ कैसे रहता है, दूसरों की सुविधा का हमेशा खयाल रखता है या नहीं, या हर प्राणी से कैसे रहता है, यह शिष्टाचार का सवाल जरूर है, लेकिन किसी दूसरी चीज से कम महत्वपूर्ण नहीं। कृष्ण शिष्टाचार का सवाल जरूर है, लेकिन किसी दूसरी चीज से कम महत्वपूर्ण नहीं। कृष्ण शिष्टाचार के उतने बड़े नमूने थे जितना कोई मर्यादित पुरुष हो सकता है। उन्होंने सद्व्यवहारी पुरुष या स्थितप्रज्ञ व्यक्ति की परिभाषा दी है। ऐसा व्यक्ति अपने ऊपर वैसा नियंत्रण रखता है जैसे कछुआ अपने शरीर पर, अपने नियंत्रण के कारण जब चाहे अपने अंगों को समेट सकता है। असावधानी में कोई हरकत नहीं हो सकती। अन्य क्षेत्रों में चाहे जो भी भेद हो, लेकिन शिष्टाचार के क्षेत्र में सचमुच अपने निखरे रूप में उन्मुक्त पुरुष

मर्यादित होता है। जो भी हो, मरणासन्न और श्रेष्ठ विद्वान के साथ शिष्टाचार की श्रेष्ठतम कहानी के रचयिता राम हैं।

राम अक्सर श्रोता रहते थे। न केवल उस व्यक्ति के साथ जिससे वे बातचीत करते थे, जैसा हर बड़ा आदमी करता है, बल्कि दूसरे लोगों की बातचीत के समय भी। एक बार तो परशुराम ने उन पर आरोप लगाया कि वह अपने छोटे भाई को बेरोक और बढ़-चढ़ कर बात करने देने के लिए जान-बूझ कर चुप लगाए थे। यह आरोप थोड़ा-बहुत सही भी है। अपने लोगों और उनके दुश्मनों के बीच होनेवाले वाद-विवाद में वे प्राय: एक दिलचस्पी लेनेवाले श्रोता के रूप में रहते थे। इसका परिणाम कभी-कभी बहुत भद्दा और दोषपूर्ण भी हो जाता था, जैसा लक्ष्मण और रावण की बहन शूर्पणखा के बीच हुआ। ऐसे मौकों पर राम दृढ़ पुरुष की तरह शांत और निष्पक्ष दीखते थे, कभी-कभी अपने लोगों की अति को रोकते थे और अक्सर उनकी ओर से या उन्हें बढ़ावा देते हुए एकाध शब्द बोल देते थे। यह एक चतुर नीति भी कही जा सकती है। लेकिन निश्चय ही यह मर्यादित व्यक्ति की भी निशानी है जो अपनी बारी आए बिना नहीं बोलता और परिस्थिति के अनुसार दूसरों को बातचीत का अधिक से अधिक मौका देता है। कृष्ण बहुत वाचाल थे। वे सुनते भी थे। लेकिन वे सुनते केवल इसीलिए थे कि वे और दिलचस्प बात कर सकें। उनके रास्ते पर चलनेवालों को उनके शब्द आज भी जादू जैसे खींचते हैं। राम चुप्पी का जादू जानते थे, दूसरों को बोलने देते थे, जब तक कि उनके लिए जरूरी नहीं हो जाता था कि बात या काम के द्वारा हस्तक्षेप करें। राम मर्यादा पुरुष थे इसलिए अपनी चुप्पी और वाणी दोनों के लिए समान रूप से याद किए जाते हैं।

राम का जीवन बिना हड़पे हुए फलने की एक कहानी है। उनका निर्वासन देश को एक शक्तिकेंद्र के अंदर बाँधने का एक मौका था। इसके पहले प्रभुत्व के दो प्रतिस्पर्धी केंद्र थे - अयोध्या और लंका। अपने प्रवास में राम अयोध्या से दूर लंका की ओर गए। रास्ते में अनेक राज्य और राजधानियाँ पड़ीं जो एक अथवा दूसरे केंद्र के मातहत थीं। मर्यादित पुरुष की नीति-निपुणता की सबसे अच्छी अभिव्यक्ति तब हुई जब राम ने रावण के राज्यों में से एक बड़े राज्य को जीता। उसका राजा बालि था। बालि से उसके भाई सुग्रीव और उसके महान सेनापति हनुमान दोनों अप्रसन्न थे। वे रावण के मेलजोल से बाहर निकल कर राम की मित्रता और सेवा में आना चाहते थे। आगे चल कर हनुमान राम के अनन्य भक्त हुए, यहाँ तक कि एक बार उन्होंने अपना हृदय चीर कर दिखाया कि वहाँ राम के सिवा और कोई भी नहीं। राम ने पहली जीत को शालीनता और मर्यादित पुरुष की तरह निभाया। राज्य हड़पा नहीं, जैसे का तैसा रहने दिया। वहाँ के ऊँचे या छोटे पदों पर बाहरी लोग नहीं बैठाए गए। कुल इतना ही हुआ कि एक द्वंद्व में बालि की मृत्यु के बाद सुग्रीव राजा बनाए गए। बालि की मृत्यु भी राम के जीवन के कुछ धब्बों में एक है। राम एक पेड़ के पीछे छिपे खड़े थे और जब उनके मित्र सुग्रीव की हालत खराब हुई तो छिपे तौर पर उन्होंने बालि पर बाण चलाया। यह कानून का उल्लंघन था। कोई संस्कारी और मर्यादा पुरुष ऐसा कभी नहीं करता। लेकिन राम कह सकते थे कि उनके सामने मजबूरी थी।

प्रशा के फ्रेडरिक महान की तरह जो बहुत सफाई के साथ व्यक्ति और राज्य-नैतिकता में भेद करते थे और इस भेद के आधार पर एक झूठ अथवा/और वादाखिलाफी के जरिए आम हत्याकांड या गुलामी रोकने के पक्षपाती थे और इसीलिए उन्होंने ऐसे राजाओं को क्षमा किया जो संधियों के प्रति वफादार तो थे लेकिन जीवन में जिन्होंने एक बार कभी संधि तोड़ी। राम भी तर्क कर सकते थे कि उन्होंने एक व्यक्ति को, यद्यपि थोड़ा-बहुत गलत तरीके से, मार कर आम हत्याएँ रोकीं और उन्होंने अपने जीवन के केवल एक दुष्टतापूर्ण काम के जरिए एक समूचे राज्य को अच्छाई के रास्ते पर लगाया और अपने सिवाय किसी और क्रम में विघ्न नहीं डाला। स्वाभाविक था कि सुग्रीव अच्छाई के मेलजोल में आए और लंका विजय करने के लिए बाद में अपनी सारी सेना आदि दी। यह सही है कि वह सब कुछ बालि की मृत्यु से हासिल हुआ। राज्य पूर्ण रूप से स्वतंत्र रहा और राम से दोस्ती संभवत: वहाँ के नागरिकों की स्वतंत्र इच्छा से की गई। फिर भी तबीयत यह होती है कि कोई मर्यादा पुरुष, छोटा या बड़ा, नियम न तोड़े - अपने जीवन में एक बार भी नहीं।

बड़े और अच्छे शासन के लिए राम की बिना हड़पे हुए फैलाव की कहानी में, बिना साम्राज्यशाही के एकीकरण और राजनीति की भाग-दौड़ में मर्यादित रूप से काम करने आदि के साथ-साथ दुश्मन के खेमे में अच्छे दोस्तों की खोज चलती रही। उन्होंने लंका में इस क्रम को दोहराया। रावण के छोटे भाई विभीषण राम के दोस्त बने। लेकिन किष्किंधा की कहानी दोहराई नहीं जा सकी। लंका में काम कठिन था, इसके दुर्गुण घोर और विद्वत्ता की बुनियाद पर बने थे। घनघोर युद्ध हुआ और बहुत-से लोग मारे गए। आगे चल कर विभीषण राजा बना और उसने रावण की पत्नी मंदोदरी को अपनी रानी बनया। लंका में भी अच्छाई का राज्य स्थापित हुआ। आज तक भी विभीषण का नाम जासूस, द्रोही, पंचमाँगी और देश अथवा दल से गद्दारी करनेवाले का दूसरा रूप माना जाता है, विशेषकर राम के शक्ति-केंद्र अवध के चारों ओर। यह एक प्रशंसनीय और दिशाबोधक बात है कि कोई कवि विभीषण के दोष नहीं भूल सका। मर्यादा पुरुषोत्तम राम अपने मित्र को आम लोगों की नजर में स्वीकार्य नहीं बना सके और राम की मित्रता मिलने पर भी विभीषण का कलंक हमेशा बना रहा। मर्यादा पुरुष अपने मित्र को स्वीकार्य बनाने का चमत्कार नहीं कर सके। यह शायद मर्यादा पुरुष की निशानी हो कि अच्छाई जीती तो जरूर लेकिन एक ऐसे व्यक्ति के जरिए जीती जिसने द्रोह भी किया और इसलिए उसके नाम पर गद्दारी का दाग बराबर लगा रहे।

कृष्ण संपूर्ण पुरुष थे। उनके चेहरे पर मुस्कान और आनंद की छाप बराबर बनी रही और खराब से खराब हालत में भी उनकी आँखें मुस्कराती रहीं। चाहे दु:ख कितना ही बड़ा क्यों न हो, कोई भी ईमानदार आदमी वयस्क होने के बाद अपने पूरे जीवन में एक या दो बार से अधिक नहीं रोता। राम अपने पूरे वयस्क जीवन में दो या शायद केवल एक बार रोए। राम और कृष्ण के देश में ऐसे लोगों की भरमार है जिनकी आँखों में बराबर आँसू डबडबाए रहते हैं और अज्ञानी लोग उन्हें बहुत ही भावुक आदमी मान बैठते हैं। एक हद तक इसमें कृष्ण का दोष है।

वे कभी नहीं रोए। लेकिन लाखों को आज तक रुलाते रहे हैं। जब वे जिंदा थे, वृंदावन की गोपियाँ इतनी दु:खी थीं कि आज तक गीत गाए जाते हैं :

निसि दिन बरसत नैन हमारे
कंचुकि पट सूखत कबहूँ उर बिच बहत पनारे।

उनके रुदन में कामना की ललक भी झलकती है लेकिन साथ ही साथ इतना संपूर्ण आत्मसमर्पण है कि स्व का कोई अस्तित्व नहीं रह गया हो। कृष्ण एक महान प्रेमी थे जिन्हें अद्‌भुत आत्मसमर्पण मिलता रहा और आज तक लाखों स्त्री-पुरुष और स्त्री वेश में पुरुष, जो अपने प्रेमी को रिझाने के लिए स्त्रियों जैसा व्यवहार करते हैं, उनके नाम पर आँसू बहाते हैं और उनमें लीन होते हैं। यह अनुभव कभी-कभी राजनीति में आ जाता है और नपुंसकता के साथ-साथ जाल-फरेब शुरू हो जाता है।

जन्म से मृत्यु तक कृष्ण असाधारण, असंभव और अपूर्व थे। उनका जन्म अपने मामा की कैद में हुआ जहाँ उनके माता व पिता, जो एक मुखिया थे, बंद थे। उनसे पहले जन्मे भाई और बहन, पैदा होते ही मार डाले गए थे। एक झोली में छिपा कर वे कैद से बाहर ले जाए गए। उन्हें जमुना के पार ले जा कर सुरक्षित स्थान में रखना था। गहराई ने गहराई को खींचा, जमुना बढ़ी और जैसे-जैसे उनके पिता ने झोली ऊपर उठाई जमुना बढ़ती गई, जब तक कि कृष्ण ने अपने चरण कमल से नदी को छू नहीं लिया। कई दशकों के बाद उन्होंने अपना काम पूरा किया। उनके सभी परिचित मित्र या तो मारे गए या बिखर गए। कुछ हिमालय और स्वर्ग की ओर महाप्रयाण कर चुके थे। उनके कुनबे की औरतें डाकुओं द्‌वारा भगाई जा रही थीं। कृष्ण द्‌वारिका का रास्ता अकेले तय कर रहे थे। विश्राम करने वह थोड़ी देर के लिए एक पेड़ की छाँह में रुके। एक शिकारी ने उनके पैर को हिरन का शरीर समझ कर बाण चलाया और कृष्ण का अंत हो गया। उन्होंने उस क्षण क्या किया? क्या उनकी अंतिम दृष्टि करुणामयी मुस्कान के साथ, जो समझ से आती है, शिकारी पर पड़ी? क्या उन्होंने अपना हाथ बाँसुरी की ओर बढ़ाया जो अवश्य ही पास में रही होगी? और क्या उन्होंने बाँसुरी पर अंतिम दैवी आलाप छेड़ा? या मुस्कान के साथ हाथ में बाँसुरी ले कर ही संतुष्ट रहे? उनके दिमाग में क्या-क्या विचार आए? जीवन के खेल जो बड़े सुखमय, यद्‌यपि केवल लीला मात्र थे, या स्वर्ग से देवताओं की पुकार, जो अपने विष्णु के बिना अभाव महसूस कर रहे थे?

कृष्ण चोर, झूठे, मक्कार और खूनी थे। और वे एक पाप के बाद दूसरा पाप बिना रत्ती भर हिचक के करते थे। उन्होंने अपनी पोषक माँ का मक्खन चुराने से ले कर दूसरे की बीवी चुराने तक का काम किया। उन्होंने महाभारत के समय में एक ऐसे आदमी से आधा झूठ बुलवाया जो अपने जीवन में कभी झूठ नहीं बोला था। उनके अपने झूठ अनेक हैं। उन्होंने सूर्य को छिपा कर नकली सूर्यास्त किया ताकि उस गोधूलि में एक बड़ा शत्रु मारा जा सके। उसके बाद फिर सूरज निकला। वीर भीष्म, पितामह के सामने उन्होंने नपुंसक शिखंडी को खड़ा कर

दिया ताकि वे बाण न चला सकें, और ख़ुद सुरक्षित आड़ में रहे। उन्होंने अपने मित्र की मदद स्वयं अपनी बहन को भगाने में की।

लड़ाई के समय पाप और अनुचित काम के सिलसिले में कर्ण का रथ एक उदाहरण है। निश्चय ही कर्ण अपने समय में सेनाओं के बीच सबसे उदार आदमी था, शायद युद्धकौशल में भी सबसे निपुण था, और अकेले अर्जुन को परास्त कर देता। उसका रथ युद्धक्षेत्र में फँस गया। कृष्ण ने अर्जुन से बाण चलाने को कहा। कर्ण ने अनुचित व्यवहार की शिकायत की। इस समय महाभारत में एक अपूर्व वक्तृता हुई जिसका कहीं कोई जोड़ नहीं, न पहले न बाद में। कृष्ण ने कई घटनाओं की याद दिलाई और हर घटना के कवितामय वर्णन के अंत में पूछा, "तब तुम्हारा विवेक कहाँ था?" विवेक की इस धारा में कम से कम उस दौरान विवेक और आलोचना का दिमाग मंद पड़ जाता है। द्रौपदी का स्मरण हो आता है कि दुर्योधन के भरे दरबार में कैसे उसकी साड़ी उतारने की कोशिश की गई। वहाँ कर्ण बैठे थे और भीष्म भी, लेकिन उन्होंने दुर्योधन का नमक खाया था। यह कहा जाता है कि कुछ हद तक तो नमक खाने का असर जरूर होता है और नमक का हक अदा करने की जरूरत होती है। कृष्ण ने साड़ी का छोर अनंत बना दिया क्योंकि द्रौपदी ने उन्हें याद किया। उनके रिश्ते में कोमलता है, यद्यपि उसका वर्णन नहीं मिलता है।

कृष्ण के भक्त उनके हर काम के दूसरे पहलू पेश करके सफाई करने की कोशिश करते हैं। उन्होंने मक्खन की चोरी अपने मित्रों में बाँटने के लिए की। उन्होंने चोरी अपनी माँ को पहले तो खिझाने और फिर रिझाने के लिए की। उन्होंने मक्खन बाल-लीला के रूप को दिखाने के लिए चुराया, ताकि आनेवाली पीढ़ियों के बच्चे उस आदर्श-स्वप्न में पलें। उन्होंने अपने लिए कुछ भी नहीं किया, या माना भी जाए तो केवल इस हद तक कि जिनके लिए उन्होंने सब कुछ किया वे उनके अंश भी थे। उन्होंने राधा को चुराया, न तो अपने लिए और न राधा की ख़ुशी के लिए, बल्कि इसलिए कि हर पीढ़ी की अनगिनत महिलाएँ अपनी सीमाएँ और बंधन तोड़ कर विश्व से रिश्ता जोड़ सकें। इस तरह की हर सफाई गैर-जरूरी है। दुनिया के महानतम ग्रथ भगवद्गीता के रचयिता कृष्ण को कौन नहीं जानता? दुनिया में हिंदुस्तान एक अकेला देश है जहाँ दर्शन को संगीत के माध्यम से पेश किया गया है, जहाँ विचार बिना कहानी या कविता के रूप में परिवर्तित हुए गाए गए हैं। भारत के ऋषियों के अनुभव उपनिषदों में गाए गए हैं। कृष्ण ने उन्हें और शुद्ध रूप में निथारा। यद्यपि बाद के विद्वानों ने एक और दूसरे निथार के बीच विभेद करने की कितनी ही कोशिश की है। कृष्ण ने अपना विचार गीता के माध्यम से ध्वनित किया।

उन्होंने आत्मा के गीत गाए। आत्मा को न माननेवाले भी उनके शब्द चमत्कार में बह जाते हैं जब वह आत्मा को अनश्वर, जल और समीर की पहुँच से बाहर तथा शरीर बदले जानेवाले परिधान के रूप में वर्णन करते हैं। उन्होंने कर्म के गीत गाए और मनुष्य को, फल की अपेक्षा किए बिना, और उसका माध्यम या कारण बने बिना, निर्लिप्तता से कर्म में जुटे रहने के लिए कहा। उन्होंने समत्व, सुख और दुःख, जीत या हार, गर्मी और सर्दी, लाभ या

हानि और जीवन के अन्य उद्वेलनों के बीच स्थिर रहने के गीत गाए। हिंदुस्तान की भाषाएँ एक शब्द 'समत्वम्' के कारण बेजोड़ हैं, जिससे समता की भौतिक परिस्थितियों और आंतरिक समता दोनों का बोध होता है। इच्छा होती है कि कृष्ण ने इसका विस्तार से बयान किया होता। ये एक सिक्के के दो पहलू हैं - समता समाज में लागू हो और समता व्यक्ति का गुण हो, जो अनेक में एक देख सके। भारत का कौन बच्चा विचार और संगीत की जादुई धुन में नहीं पला है! उनका औचित्य स्थापित करने की कोशिश करना उनके पूरे लालन-पालन की असलियत से इनकार करना है। एक मानी में कृष्ण आदमी को उदास करते हैं। उनकी हालत बिचारे हृदय की तरह है जो बिना थके अपने लिए नहीं बल्कि निरंतर दूसरे अंगों के लिए धड़कता रहता है। हृदय क्यों धड़के या दूसरे अंगों की आवश्यकता पर क्यों मजबूती या साहस पैदा करे? कृष्ण हृदय की तरह थे लेकिन उन्होंने आगे आनेवाली हर संतान में अपनी तरह होने की इच्छा पैदा की है। वे उस तरह के बन न सकें लेकिन इस प्रक्रिया में हत्या और छल करना सीख जाते हैं।

राम और कृष्ण पर तुलनात्मक दृष्टि डालने पर विचित्र बात देखने में आती है। कृष्ण हर मिनट में चमत्कार दिखाते थे। बाढ़ और सूर्यास्त आदि उनकी इच्छा के गुलाम थे। उन्होंने संभव और असंभव के बीच की रेखा को मिटा दिया था। राम ने कोई चमत्कार नहीं किया। यहाँ तक कि भारत और लंका के बीच का पुल भी एक-एक पत्थर जोड़ कर बनाया। भले ही उसके पहले समुद्र-पूजा की विधि करनी और बाद में धमकी देनी पड़ी। लेकिन दोनों के जीवन की संपूर्ण कृतियों की जाँच करने और लेखा मिलाने पर पता चलेगा कि राम ने अपूर्व चमत्कार किया और कृष्ण ने कुछ भी नहीं। एक महिला के साथ दोनों भाइयों ने अयोध्या और लंका के बीच 2,000 मील की दूरी तय की। जब वे चले तो केवल तीन थे, जिनमें दो लड़ाई और एक व्यवस्था कर सकते थे। जब वे लौटे, एक साम्राज्य बना चुके थे। कृष्ण ने सिवा शासक वंश की एक शाखा से दूसरी को गद्दी दिलाने के और कोई परिवर्तन नहीं किया। यह एक पहेली है कि कम से कम राजनीति के दायरे में मर्यादा पुरुष महत्वपूर्ण और सार्थक, और उन्मुक्त या संपूर्ण पुरुष छोटा और निरर्थक साबित हुआ। यह काल की पहेली के समान ही है। घटनाहीन जीवन में हर क्षण भार बन जाता है और बर्दाश्त के बाहर लंबा लगता है। लेकिन एक दशक या एक जीवन में उसका संकलित विचार करने से सहज और जल्दी बीता हुआ लगता है। उत्तेजना के जीवन में एक क्षण मोहक लगता है और समय इच्छा के विपरीत तेजी से बीतता लगता है। पर साल-दो साल बाद पुनर्विचार करने पर भारी और धीर-धीरे बीता हुआ लगता है। मर्यादा के सर्वोच्च पुरुष, मर्यादा पुरुषोत्तम राम ने राजनैतिक चमत्कार हासिल किया। पूर्णता के देव कृष्ण ने अपनी कृतियों से विश्व को चकाचौंध किया, जीवन के नियम सिखाए, जो किसी और ने नहीं किया था लेकिन उनके संपूर्ण व्यक्तित्व की राजनैतिक सफलता ठोस होने के बजाय बुलबुले जैसी है।

गांधी राम के महान वंशज थे। आखिरी क्षण में उनकी जबान पर राम का नाम था। उन्होंने मर्यादा पुरुषोत्तम के ढाँचे में अपने जीवन को ढाला और देशवासियों का भी आह्वान

किया। लेकिन उनमें कृष्ण की एक बड़ी और प्रभावशाली छाप दीखती है। उनके पत्र और भाषण, जब रोज या साप्ताहिक तौर पर सामने आते थे, तो एकसूत्रता में पिरोए लगते थे। लेकिन उनकी मृत्यु के बाद उन्हें पढ़ने पर विभिन्न परिस्थितियों में अर्थ और रुख परिवर्तन की नीति-कुशलता और चतुराई का पता चलता है। द्वारिका ने मथुरा का बदला चुकाया। द्वारिका का पूत जमुना के किनारे मारा और जलाया गया। हजारों साल पहले जमुना का पुत्र द्वारिका के पास मारा और जलाया गया था। लेकिन द्वारिका के यह पुत्र मर्यादा पुरुषोत्तम की ओर अभिमुख थे जो अपने जीवन को अयोध्या के ढाँचे में ढालने में बहुलांश में सफल भी हुए। फिर भी वह दोनों के विचित्र और बेजोड़ मिश्रण थे।

राम और कृष्ण ने मानवीय जीवन बिताया। लेकिन शिव बिना जन्म और बिना अंत के हैं। ईश्वर की तरह अनंत हैं लेकिन ईश्वर के विपरीत उनके जीवन की घटनाएँ समय क्रम में चलती हैं और विशेषताओं के साथ इसलिए वे ईश्वर से भी अधिक असीमित हैं। शायद केवल उनकी ही एकमात्र किंवदंती है जिसकी कोई सीमा नहीं है। इस मामले में उनका मुकाबला कोई और नहीं कर सकता। जब उन्होंने प्रेम के देवता, काम के ऊपर तृतीय नेत्र खोला और उसे राख कर दिया तो कामदेव की धर्म-पत्नी और प्रेम की देवी, रति, रोती हुई उनके पास गई और अपने पति के पुनर्जीवन की याचना की। निस्संदेह कामदेव ने एक गंभीर अपराध किया था, क्योंकि उसने महादेव शिव को उद्विग्न करने की कोशिश की जो बिना नाम और रूप तथा तृष्णा के ही मन से ध्यानावस्थित होते हैं। कामदेव ने अपनी सीमा के बाहर प्रयास किया और उसका अंत हुआ। लेकिन हमेशा चहकनेवाली रति पहली बार विधवा रूप में होने के कारण उदास दीख पड़ी। दुनिया का भाग्य अधर में लटका था। रति क्रीड़ा अब के बाद बिना प्रेम के होनेवाली थी। शिव माफ नहीं कर सकते थे। उन्होंने सजा उचित दी लेकिन रति परेशान थी। दुनिया के भाग्य के ऊपर करुणा या रति की उदासी ने शिव को डिगा दिया। उन्होंने कामदेव को जीवन तो दिया लेकिन बिना शरीर के। तब से कामदेव निराकर है। बिना शरीर के काम हर जगह पहूँच कर प्रभाव डाल सकता है और घुल-मिल सकता है। ऐसा लगता है कि यह खेल शिव के ऊँचे पहाड़ी वासस्थान कैलाश पर हुआ होगा। मानसरोवर झील, जिसके पारदर्शी और निर्मल जल में हंस मोती चुगते हैं, और उतना ही महत्वपूर्ण, अथाह गहराई और अपूर्व छविवाले राक्षस ताल से लगा अजेय कैलाश, जहाँ बारहों महीने बर्फ जमी रहती है और जहाँ अखंड शांति का साम्राज्य छाया रहता है, हिंदू कथाओं के अनुसार धरती का सबसे रमणीक स्थल और केंद्रबिंदु है।

धर्म और राजनीति, ईश्वर और राष्ट्र या कौम हर जमाने में और हर जगह मिल कर चलते हैं। हिंदुस्तान में यह अधिक होता है। शिव के सबसे बड़े कारनामों में एक उनका पार्वती की मृत्यु पर शोक प्रकट करना है। मृत पार्वती का अंग-अंग गिरता रहा फिर भी शिव ने अंतिम अंग गिरने तक नहीं छोड़ा। किसी प्रेमी, देवता, असुर या किसी की भी साहचर्य निभाने की ऐसी पूर्ण और अनूठी कहानी नहीं मिलती। केवल इतना ही नहीं, शिव की यह कहानी हिंदुस्तान की अटूट और विलक्षण एकता की भी कहानी है। जहाँ पार्वती का एक अंग गिरा, वहाँ

एक तीर्थ बना। बनारस में मणिकर्णिका घाट पर मणिकुंतल के साथ कान गिरा, जहाँ आज तक मृत व्यक्तियों को जलाए जाने पर निश्चित रूप से मुक्ति मिलने का विश्वास किया जाता है। हिंदुस्तान के पूर्वी किनारे पर कामरूप में एक हिस्सा गिरा जिसका पवित्र आकर्षण सैकड़ों पीढ़ियों तक चला आ रहा है और आज भी देश के भीतरी हिस्सों में बूढ़ी दादियाँ अपने बच्चों को पूरब की महिलाओं से बचने की चेतावनी देती हैं क्योंकि वे पुरुषों को मोह कर भेड़-बकरी बना देती हैं।

सर्जक ब्रह्मा और पालक विष्णु में एक बार बड़ाई-छुटाई पर झगड़ा हुआ। वे संहारक शिव के पास फैसले के लिए गए। उन्होंने दोनों को अपने छोर का पता लगाने के लिए कहा, एक को अपने सिर और दूसरे को पैर का, और कहा कि पता लगा कर पहले लौटनेवाला विजेता माना जाएगा। यह खोज सदियों तक चलती रही और दोनों निराश लौटे। शिव ने दोनों को अहंकार से बचने के लिए कहा। त्रिमूर्ति इस पर निर्णय कर खूब हँसे होंगे, और शायद दूसरे मौकों पर भी हँसते होंगे। विष्णु के बारे में यह बता देना जरूरी है, जैसा कोई दूसरी कहानियों से पता चलता है, कि वह भी अनंत निद्रा और अनंत आकार के माने जाते हैं जब तक शिव की लंबाई-चौड़ाई अनंत में तय न कर उसकी परिभाषा न दी जाए। एक दूसरी कहानी उनके दो पुत्रों के बीच की है जो एक खूबसूरत औरत के लिए झगड़ रहे थे। इस बार भी इनाम उसको मिलनेवाला था जो सारी दुनिया को पहले नाप लेगा। कार्तिकेय स्वास्थ्य और सौंदर्य की प्रतिमूर्ति थे और एक पल नष्ट किए बिना दौड़ पर निकल पड़े। हाथी की सूँडवाले गणेश, लंबोदर, बैठे सोचते और बहुत देर तक मुँह बनाए बैठे रहे। कुछ देर में उनको रास्ता सूझा और उनकी आँखों में शरारत चमकी, गणेश उठे और धीमे-धीमे अपने पिता के चारों और घूमे और निर्णय उनके पक्ष में रहा। कथा के रूप में तो यह बिना सोचे और जल्दबाजी के बदले चिंतन, धीमे-धीमे सोच-विचार कर काम करने की सीख देती है। लेकिन मूल रूप से यह शिव की कथा है जो असीम हैं और साथ-साथ सात पगों में नापे जा सकते हैं। निस्संदेह, शरीर से भी शिव असीम हैं।

हाथी की सूँड़वाले गणेश का अपूर्व चरित्र है, पिता के हस्तकौशल के अलावा अपनी मंद यद्यपि तीक्ष्ण बुद्धिमानी के कारण। जब वह छोटे थे, उनकी माता ने उन्हें स्नानगृह के दरवाजे पर देख-रेख करने और किसी को अंदर न आने देने के लिए कहा। प्रत्युत्पन्न क्रियावाले शिव उन्हें ढकेल कर अंदर जाने लगे, लेकिन आदेश से बँधे गणेश ने उन्हें रोका। पिता ने पुत्र का गला काट दिया। पार्वती को असीम वेदना हुई। उस रास्ते जो पहला जीव निकला वह एक हाथी था। शिव ने हाथी का सिर उड़ा दिया और गणेश के धड़ पर रख दिया। उस जमाने से आज तक गहरी बुद्धिवाले, मनुष्य की बुद्धि के साथ गज की स्वामी-भक्ति के रखनेवाले गणेश, हिंदू घरों में हर काम के शुरू में पूजे जाते हैं। उनकी पूजा से सफलता निश्चित हो जाती है। मुझे कभी-कभी विस्मय होता है कि क्या शिव ने इस मामले में अपने चरित्र के खिलाफ काम नहीं किया। क्या यह काम उचित था? हालाँकि उन्होंने गणेश को पुनर्जीवित किया और इस तरह व्याकुल पार्वती को दुःख से छुटकारा दिया। लेकिन उस हाथी के बच्चे की माँ का क्या हाल हुआ होगा, जिसकी जान गई? लेकिन सवाल का जवाब खुद सवाल में ही

मिल जाता है। नए गणेश से हाथी और पुराने गणेश दोनों में से कोई नहीं मरा। शाश्वत आनंद और बुद्धि का यह मेल कितना विचित्र है तथा हाथी और मनुष्य का मिश्रण कितना हास्यास्पद।

शिव का एक दूसरा भी काम है जिसका औचित्य साबित करना कठिन है। उन्होंने पार्वती के साथ नृत्य किया। एक-एक ताल पर पार्वती ने शिव को मात किया। तब उत्कर्ष आया। शिव ने एक थिरकन की और अपना पैर ऊपर उठाया। पार्वती स्तब्ध और विस्मयचकित खड़ी रहीं और वह नारी की मर्यादा के खिलाफ भंगिमा नहीं दरशा सकीं। अपने पति के इस अनुचित काम पर आश्चर्य प्रकट करती खड़ी रहीं। लेकिन जीवन का नृत्य ऐसे उतार-चढ़ाव से बनता है कि जिसे दुनिया के नाक-भौं चढ़ानेवाले अभद्र कहते हैं और जिससे नारी की मर्यादा बनाने की बात कहते हैं। पता नहीं शिव ने शक्ति की भंगिमा एक मुकाबले में, जिसमें वह कमजोर पड़ रहे थे, जीत हासिल करने के लिए प्रदर्शित की या सचमुच जीवन के नृत्य के चढ़ाव में कदम-कदम बढ़ते हुए वे उद्वेलित हो उठे थे।

शिव ने कोई भी ऐसा काम नहीं किया जिसका औचित्य उस काम से ही न ठहराया जा सके। आदमी की जानकारी में वह इस तरह के अकेले प्राणी हैं जिनके काम का औचित्य अपने-आप में था। किसी की भी उस काम के पहले कारण और न बाद में किसी काम का नतीजा ढूँढ़ने की आवश्यकता पड़ी और न औचित्य ही ढूँढ़ने की। जीवन कारण और कार्य की ऐसी लंबी श्रृंखला है कि देवता और मनुष्य दोनों को अपने कामों का औचित्य दूर तक जा कर ढूँढ़ना होता है। यह एक खतरनाक बात है। अनुचित कामों को ठीक ठहराने के लिए चतुराई से भरे, खीझ पैदा करनेवाले तर्क पेश किए जाते हैं। इस तरह झूठ को सच, गुलामी को आजादी और हत्या को जीवन करार दिया जाता है। इस तरह के दुष्टतापूर्ण तर्कों का एकमात्र इलाज है शिव का विचार, क्योंकि वह तात्कालिकता के सिद्धांत का प्रतीक है। उनका हर काम स्वयं में तात्कालिक औचित्य से भरा होता है और उसके लिए किसी पहले या बाद के काम को देखने की जरूरत नहीं होती।

असीम तात्कालिकता की इस महान किंवदंती ने बड़प्पन के दो और स्वप्न दुनिया को दिए हैं। जब देवों और असुरों ने समुद्र मथा तो अमृत के पहले विष निकला। किसी को यह विष पीना था। शिव ने उस देवासुर संग्राम में कोई हिस्सा नहीं लिया और न तो समुद्र-मंथन के सम्मिलित प्रयास में ही। लेकिन कहानी बढ़ाने के लिए वे विषपान कर गए। उन्होंने अपनी गर्दन में विष को रोक रखा और तब से वे नीलकंठ के नाम से जाने जाते हैं। दूसरा स्वप्न हर जमाने में हर जगह पूजने योग्य है। जब एक भक्त ने उनके बगल में पार्वती की पूजा करने से इनकार किया तो शिव ने आधा पुरुष आधा नारी, अर्धनारीश्वर रूप ग्रहण किया। मैंने आपाद-मस्तक इस रूप को अपने दिमाग में उतार पाने में दिक्कत महसूस की है, लेकिन उसमें बहुत आनंद मिलता है।

मेरा इरादा इन किंवदंतियों के क्रमशः ह्रास को दिखाने का नहीं है। शताब्दियों के बीच वे गिरावट का शिकार होती रही हैं। कभी-कभी ऐसा बीज जो समय पर निखरता है, वह विपरीत हालतों में सड़ भी जाता है। राम के भक्त समय-समय पर पत्नी निर्वासक, कृष्ण के भक्त दूसरों की बीवियाँ चुरानेवाले और शिव के भक्त अघोरपंथी हुए हैं। गिरावट और क्षतरूप की इस प्रक्रिया में मर्यादित पुरुष संकीर्ण हो जाता है, उन्मुक्त पुरुष दुराचारी हो जाता है, असीमित पुरुष प्रसंग-बद्ध और स्वरूपहीन हो जाता है। राम का गिरा हुआ रूप संकीर्ण व्यक्तित्व, कृष्ण का गिरा हुआ रूप दुराचारी व्यक्तित्व और शिव का गिरा हुआ रूप स्वरूपहीन व्यक्तित्व बन जाता है। राम के दो अस्तित्व हो जाते हैं, मर्यादित और संकीर्ण, कृष्ण के उन्मुक्त और क्षुद्र प्रेमी, शिव के असीमित और प्रसंगबद्ध। मैं कोई इलाज सुझाने की धृष्टता नहीं करूँगा और केवल इतना कहूँगा : ऐ भारतमाता, हमें शिव का मस्तिष्क दो, कृष्ण का हृदय दो तथा राम का कर्म और वचन दो। हमें असीम मस्तिष्क और उन्मुक्त हृदय के साथ-साथ जीवन की मर्यादा से रचो।

(अंग्रेजी मासिक मैनकाइंड, अगस्त 1955 से अनूदित)